भारतीय ज्ञान परंपरा

संस्कृति, दर्शन, शैक्षिक विचारधाराएँ और नवाचार

सम्पादक :
डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

भारतीय ज्ञान परंपरा :

संस्कृति, दर्शन, शिक्षा विचारधाराएँ और नवाचार

सम्पादक :

डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

Ph.D., D.Lit. (Sub.)

निदेशक, कॉम्पिटिशन प्लस ग्रुप ऑफ इन्स्टीट्यूशन,

अजमेर

छवि पब्लिकेशन्स

अजमेर-305001

प्रकाशक :
छवि पब्लिकेशन्स
अजमेर-305001
मो. 9660111549

संस्करण :
प्रथम 2022-2023

ISBN : 978 - 81 - 89435 - 64 - 6

मूल्य - 300/-

रचना - भारतीय ज्ञान परम्परा में शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार

सम्पादक - डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

मुद्रक - श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स, अजमेर

1. भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन और आर्यसमाज

डॉ. रीता पारीक
प्राचार्य
हुकुमचन्द नोबेल इंस्टीट्यूट ऑफ साईंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

19वीं शताब्दी के पुनर्जागरण आंदोलनों का ऐतिहासिक और राजनीतिक विश्लेषण किया जाये तो यह विचार उत्पन्न होता है कि आर्यसमाज का सर्वाधिक योगदान पुनर्जागरण काल में ही नहीं, अपितु परवर्ती राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक जनजागरण में सर्वाधिक हैं। महर्षि दयानन्द ने 1875 में बम्बई में आर्यसमाज की स्थापना की थी। ब्रिटिश राज की कुदृष्टि के फलस्वरूप भी महर्षि दयानन्द ने सर्वप्रथम स्वराज, स्वदेशी, और स्वभाषा का नारा दिया था। कालान्तर में कांग्रेस की स्थापना 1885 में हुई, और कांग्रेस ने शनैः शनैः आर्यसमाज के तीनों आंदोलनों को स्वीकार किया। गोपाल कृष्ण गोखले ने स्वदेशी आंदोलन, तो दादा भाई नौरोजी ने स्वराज्य का आंदोलन और महात्मा गांधी ने स्वभाषा के रूप में हिन्दी (आर्य भाषा) को स्वीकार करने का निर्णय लिया था।

यद्यपि 1857 की क्रांति से भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन को आघात पहुँचा था। इस बात को भली भांति महर्षि दयानन्द समझते थे और उन्होंने संपूर्ण चिंतन को स्वीकार करते हुए ही आर्यसमाज के सिद्धान्तों में इस तथ्य को स्वीकार किया कि भारतीय संस्कृति और भारत का निर्माण तब तक नहीं हो सकता, तब तक मानव का निर्माण नहीं होगा। इसलिए प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं वेदों को आधार बनाकर उन्होंने भारत के अतीत की स्वर्णिम स्थितियों को समाज के समक्ष रखा। कांग्रेस के नरम दल और गरम दल दोनों में आर्यसमाजी सदस्य उपस्थित होते थे, लेकिन जिस प्रकार 1907 में कांग्रेस का सूरत विभाजन हुआ उससे स्वामी श्रद्धानन्द बहुत दुखी हुए। उन्होंने अपने लेख में लिखा था– ''यदि अग्नि और खड्ग की धार पर चलने वाले दस पागल आर्य भी निकल आवें तो राजा और प्रजा दोनों को होश में ला सकते हैं। भगवन्! आर्यसमाजियों की आँखें न जाने कब खुलेंगी?'' इसी दृष्टि से आप नरम दल वालों के लिये 'भिक्षार्थी' गरम दल वालों के लिये 'सुखार्थी' और सरकार के लिये 'गोराशाही' शब्दों का प्रयोग

किया करते थे।

आर्यसमाजी भारतीय स्वराज्य की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील थे। वे नरम दल की शैक्षिक और सुधारवादी नीतियों के समर्थक थे लेकिन राजनीतिक अधिकारों के लिए उनकी भिक्षावृत्ति आर्यसमाज को स्वीकार नहीं थी। आर्यसमाज ने कांग्रेस के आंदोलन में कंधे से कंधा मिलाकर जहाँ संवैधानिक सुधारों में अपनी रचनात्मक भूमिका का निर्वाह किया वहीं क्रांतिकारी आंदोनलन में भी अपनी सक्रिय भूमिका निभाई।

स्वामी श्रद्धानन्द स्वाधीनता को प्रथम वरीयता मानते थे। इसलिए स्वामी श्रद्धानन्द ने गांधीजी के असहयोग आंदोलन का मनोयोग से साथ दिया और उसमें भाग लिया। इस संबंध में महात्मा गांधी द्वारा बम्बई में सत्याग्रह की घोषणा का समाचार पाते ही स्वामी श्रद्धानन्द ने स्पष्ट कर दिया था- ''मैंने अभी-अभी सत्याग्रह की प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर कर दिए हैं। इस धर्मयुद्ध में सम्मिलित होने से मैं बहुत प्रसन्न हूँ।''

आर्यसमाज राजनीतिक स्वाधीनता का पक्षधर था इसलिए प्राचीन राजनीतिक सिद्धांतों के आधार पर लोकतांत्रिक सुधार करना उन्हें अभीष्ट था। इसी भावना को दृष्टि में रखते हुए आर्यसमाज ने गुरुकुल और दयानन्द एंग्लो वैदिक (डी.ए.वी. संस्थाएं) महिला और पुरुषों के लिए खोलीं। आर्यसमाज के प्रसिद्ध नेता लाला लाजपत राय ने जिस प्रकार राष्ट्रीय आंदोलन में भाग लिया वह सर्वाधिक उल्लेखनीय है। आर्यसमाज ने समाज में व्याप्त कुरीतियों, अंधविश्वासों, अशिक्षा, और सामाजिक भेदभावों के विरुद्ध कठोरता से इनका खण्डन करते हुए सुधारवादी दृष्टिकोण पैदा किया। स्वामी दयानन्द एक क्रांतिकारी द्रष्टा थे इसीलिए उन्होंने भावी भारत के निर्माण में सामाजिक और धार्मिक सुधारों के साथ-साथ राजनीतिक सुधारों के लिए राष्ट्रीय भावना के साथ उद्दीप्त करने का महनीय कार्य किया। उन्होंने तत्कालीन भारत की सामाजिक और राजनीतिक चुनौतियों का सामना किया और भारत के नवनिर्माण की भूमिका को स्वीकार किया। आर्यसमाज के भाई परमानन्द (भगत सिंह के चाचा), अजीत सिंह, भगत सिंह, रामप्रसाद बिस्मिल, गेंदालाल दीक्षित इत्यादि महापुरुषों का योगदान सर्वविदित है।

आर्यसमाज की संस्थाओं में पढ़ने वाले लोग गांधी जी के सत्याग्रह, असहयोग आंदोलन और विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार जैसी गतिविधियों में बढ़-चढ़ कर भाग लिया करते थे। इसी के कारण ब्रिटिश सरकार की गृह राजनीतिक गोपनीय विभाग की रिपोर्ट में आर्यसमाज द्वारा ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध राष्ट्रीय आंदोलन में भाग लेने के प्रमाण मिलते हैं। गुजरांवाला के डिप्टी कमिश्नर ने लिखा था, ''आर्य समाज की किसी भी शिखर संस्था को बेकार ही अनुदान नहीं दिया जाना चाहिए और किसी भी ऐसे व्यक्ति

को, जो इस संगठन के धार्मिक सिद्धान्तों का प्रचार करता है, सरकारी या स्थानीय निकायों में नौकरी नहीं दी जानी चाहिए।''

स्त्रियों में राष्ट्रीय भावना को उत्पन्न करने का प्रयास आर्य समाज की विशिष्ट स्थितियों को उजागर करता है। 5 अप्रेल 1912 को लाहौर में आयोजित हिन्दू शिक्षा सम्मेलन में स्त्री शिक्षा के संबंध में विशेष प्रस्ताव पारित किये गये थे। इस विषय में लाहौर आर्य समाज के नेता रोशनलाल की धर्मपत्नी सरला देवी ने 10 जुलाई 1907 को उद्घोषित किया था कि भारतीय महिलाएँ घर गृहस्थी के कार्य में दक्ष है लेकिन अब उन्हें राष्ट्रीय मामलों में सक्रिय होना चाहिए और राजनीति के क्षेत्र में अपने पतियों के कंधे से कंधा मिलाकर चलना चाहिए।

उत्तर प्रदेश में भाई रोशन सिंह, भाई बालमुकुन्द, श्री विष्णुशरण दुबलिश जैसे व्यक्तियों ने उत्तर प्रदेश में राष्ट्रीय आंदोलन की गतिविधियों में भाग लिया। उत्तर प्रदेश के चार मुख्यमंत्री- पं. गोविन्द वल्लभ पंत, श्री चन्द्रभानु गुप्त, श्रीमती सुचेता कृपलानी, श्री चौधरी चरण सिंह ये सभी आर्यसमाज की कोख से उत्पन्न स्वतंत्रता संग्राम सैनानी रहे। यहाँ तक कि महात्मा गाँधी के आश्रम के सहयोगी के रूप में काम करने वाले श्री गणपत विद्यालंकार, श्री अवनिमोहन विद्यालंकार, श्री सुभाष विद्यालंकार इत्यादि प्रमुख हैं।

आर्य समाज के राष्ट्रीय आंदोलन में साहित्यकार और कवियों ने भी बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया। पं. नाथूराम शर्मा शंकर (हर्दुआ गंज, उत्तर प्रदेश) के गीतों ने राष्ट्रवादी आंदोलन को उद्वेलित किया।

आर्यसमाज ने प्रखर राष्ट्रवाद के द्वारा राजनीतिक जागरण का कार्य किया। महर्षि दयानन्द के नेतृत्व में **'वेदों की ओर लौटो'** का सिद्धान्त मानते हुए आर्यसमाज ने जिस राष्ट्रवाद को जागृत किया, उसने भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन को एक नई दिशा दी। वे विदेशियों की किसी धार्मिक-सांस्कृतिक घुसपैठ को सहन करने को तैयार नहीं हैं, क्योंकि वे समझते थे कि किसी विदेशी प्रभाव को अंगीकार कर लेने से राष्ट्रीय भावना, जिसका वे पोषण करना चाहते थे, संकट में पड़ जायेगी।

इस प्रकार युग-स्रष्टा दयानन्द ने भारतीय जनता के लिए न केवल राष्ट्रधर्म अपितु राजधर्म, अर्थात् भारतीय जनता की सम्प्रभुता का भी स्पष्ट शब्दों में निर्धारण कर दिया।

आर्यसमाज की मान्यता थी कि आर्यावर्त (भारत) आर्यों का देश है, जिसकी संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृति है। जिसने राजनीतिक रूप से देश में महान शासन व्यवस्थाओं को जन्म दिया। इस राष्ट्रीय भावना के आधार पर आर्यसमाज ने अपने

आंदोलन को पुनर्जीवित किया।

इसी राष्ट्रीय भावना के कारण ही आर्यसमाज की संस्थाओं पर ब्रिटिश इंडिया की कुदृष्टि बनी रही। टाइम्स के संवाददाता मि. शिरोल ने अपनी पुस्तक '**इंडियन अनरेस्ट**' (लंदन 1910) में गुरुकुल कांगडी को राजद्रोह के मुख्य केन्द्र के रूप में लिखा है। गुरुकुल वस्तुत: उत्तर प्रदेश, बंगाल, पंजाब के अनेक क्रांतिकारियों और राष्ट्रभक्तों का केन्द्र था। यहां तक कि गदर पार्टी के संस्थापक लाला हरदयाल भी एक माह तक न्यूयार्क के सेंट फ्रांसिस्को में पुलिस की आँखों में धूल झोंक कर गुरुकुल के ब्रह्मचारियों को स्वराज्य का मन्त्र देते रहे। गुरुकुल में गोपनीय दृष्टि से रहे थे।

अंग्रेजी साम्राज्य द्वारा आर्यसमाजियों और उनकी संस्थाओं पर दंडात्मक/दमनात्मक कार्रवाई की गई। गुलाबचन्द 35वीं सिख रेजीमेन्ट में क्लर्क था। उसे इसलिए नौकरी से पृथक् कर दिया गया कि वह आर्यसमाजी था।

करनाल के डिप्टी कमिश्नर ने पानीपत के प्रमुख पुरुषों को बुलाकर कहा कि यदि तुम्हारे यहाँ कोई आर्यसमाजी रहता हो तो उसे निकाल दो। स्वयं उन प्रमुख पुरुषों में ही दो आर्यसमाजी थे।

जाट रेजीमेन्ट के सिपाही आर्यसमाजी विचारधारा रखते थे। उन्हें यज्ञोपवीत उतार देने की आज्ञा दी गई।

सिपाहियों को आदेश दिया गया कि वे 'सद्धर्म प्रचारक' एवं 'आर्यमित्र' पत्रों को न खरीदें। यह आदेश इलाहाबाद के एक नायक (सिपाही) को विशेष तौर से मिला कि वह समाज अथवा नौकरी में से एक को छोड़ दे।

पश्चिमोत्तर भारत के प्रसिद्ध आर्यसमाजी नेता पं. भगवानदीन को सरकारी नौकरी छोड़ देने पर ही तरह-तरह के प्रतिबन्धों से छुटकारा मिल सका। लाला लाजपत राय को देश निकाला, महात्मा हंसराज एवं भाई परमानन्द को गिरफ्तार कर लिया गया।

कर्नल पर्सी ने अपनी टिप्पणी में लिखा है- जिलाधीश, पुलिस अधीक्षक, डिप्टी कमिश्नर एवं उन सभी ब्रिटिश अधिकारियों से सम्पर्क कर, जहाँ-जहाँ रेजीमेण्ट सक्रिय रही थी, सरकार को रिपोर्ट भेजी। सभी आरोपों, सन्देहों को निराधार घोषित करते हुए, अन्त में निष्कर्ष के तौर पर उस सच्चे सैनिक अधिकारी ने लिखा- 'व्यक्तिगत तौर पर मैं, 'सत्यार्थ प्रकाश' में कोई राजद्रोह नहीं रख पाता और इस आरोप में कोई दम नहीं है कि रेजीमेण्ट के अधिकांश सैनिक आर्यसमाजी हैं।'

सर वैलेन्टाइन शिरोल ने लिखा है- ''दयानन्द की शिक्षाओं की मुख्य प्रवृत्ति हिन्दुत्व का सुधार करने की उतनी नहीं है जितनी उसे उन विदेशी प्रभावों के विरुद्ध

प्रतिरोध के लिये संगठित करने की है, जो उनके विचार में उसका विराष्ट्रीयकरण कर रहे थे।''

गुरुगुल कांगडी के संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द और गुरुकुल के आचार्य रामदेव ने आर्यसमाज के विषय में लिखा है- ''जब आर्यसमाज प्राचीन भारत का गौरवगान करता है तो उससे राष्ट्रवाद का पोषण करने वाले तत्त्वों को उत्तेजना मिलती है और उस तरुण राष्ट्रवादी का सुषुप्त राष्ट्रीय अहंकार जाग उठता है तथा आकांक्षायें प्रज्वलित हो उठती है जिसके कानों में निरन्तर यह शोकपूर्ण मन्त्र फूंका गया था कि भारत का इतिहास सतत अपमान, अध:पतन, विदेशियों की पराधीनता तथा बाह्य शोषण की शोचनीय गाथा है।''

महर्षि दयानन्द मूल रूप में वेदों के ज्ञाता, समाज सुधारक, और ईश्वर भक्त थे। उन्होंने आध्यात्मिक आंदोलन का सूत्रपात किया था। उन्होंने अपने महत्वूर्ण ग्रन्थ सत्यार्थ-प्रकाश में अपने राजनीतिक विचारों को भी एक अध्याय में प्रतिपादित किया है। इसके कारण अंग्रेजों ने आर्यसमाज को राजद्रोही संस्था मानते हुए इसके विरुद्ध कार्य किया जबकि आर्यसमाज स्वयं को राजनीतिक संस्था न मानते हुए समाज सुधारक और धार्मिक सुधारक के रूप में ही घोषित करती रही। श्यामजी कृष्ण वर्मा महर्षि दयानन्द के शिष्य थे और अजमेर की परोपकारिणी सभा से संबद्ध रहे। कालांतर में उन्होंने इंग्लैण्ड में **इंडिया हाउस** की स्थापना की जिसमें भारत के जो युवा क्रांतिकारी और मेधावी छात्र इंग्लैण्ड में उच्च शिक्षा के लिए पढ़ने जाया करते थे उन्हें छात्रवृत्ति प्रदान कर भारतीय स्वाधीनता के लिए वे उत्प्रेरित करते थे। श्यामजी कृष्ण वर्मा पर महर्षि दयानन्द का प्रभाव था। लाला लाजपत राय और भगत सिंह के चाचा अजित सिंह को राष्ट्रीय आंदोलन में भाग लेने के कारण ही देशनिकाला दिया गया था। आर्यसमाज के ही भाई परमानन्द ने तारीखे-हिन्द में राष्ट्रीय आंदोलन की अनेक गतिविधियों का उल्लेख किया है।

वस्तुत: लाला लाजपत राय का विश्वास था कि केवल एक स्वतन्त्र देश के राजनीतिज्ञ ही स्वयं को उदारवादियों, रूढ़िवादियों, जनतन्त्रवादियों अथवा दक्षिणपंथी, वामपंथी आदि के रूप में संगठित कर सकते हैं। एक पराधीन देश की राजनीति तो केवल राष्ट्रवाद की राजनीति ही हो सकती है। उसका एक मात्र उद्देश्य दासता के बन्धनों को काटकर मातृभूमि को स्वतन्त्र कराना होना चाहिए। देशभक्ति उनका धर्म होना चाहिए और मातृभूमि उनकी उपास्य देवी।

❑❑❑